वर्ष : 13 अंक : 2 ❑ मार्च-अप्रैल, 2021

दृष्टिकोण

संपादक मंडल

डॉ. अरुण अग्रवाल
ट्रेन्ट विश्वविद्यालय, पीटरबरो, ओंटारियो

डॉ. दया शंकर तिवारी
दिल्ली विश्वविद्यालय

डॉ. आनंद प्रकाश तिवारी
काशी विद्यापीठ विश्वविद्यालय, वाराणसी

डॉ. प्रकाश सिन्हा
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

डॉ. दीपक त्यागी
दीन दयाल उपाध्याय विश्वविद्यालय, गोरखपुर

डॉ. अरुण कुमार
रांची विश्वविद्यालय, रांची

डॉ. महेश कुमार सिंह
सिद्धू कान्हू विश्वविद्यालय, दुमका

डॉ. हरिश्चन्द्र अग्रहरि
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा

डॉ. पूनम सिंह
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

डॉ. एस. के. सिंह
पटना विश्वविद्यालय, पटना

डॉ. अनिल कुमार सिंह
जे.पी. विश्वविद्यालय, छपरा

डॉ. मिथिलेश्वर
वीर कुंअर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

डॉ. अमर कान्त सिंह
तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

डॉ. ऋतेश भारद्वाज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. स्वदेश सिंह
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. विजय प्रताप सिंह
छत्रपति साहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर

संपादकीय सम्पर्क:

448, पॉकेट-5, मयूर विहार, फेज-I, दिल्ली-110091
फोन : 011-22753916, 40564514, 35522994 Mobile: 9710050610, 9810050610
e-mail : editorialindia@yahoo.com; editorialindia@gmail.com; delhijournals@gmail.com
Website : www.ugc-care-drishtikon.com

©Editorial India
Editorial India is a content development unit of Permanence Education Services (P) Ltd.

ISSN 0975-119X

नोट: पत्रिका में प्रकाशित लेखकों के विचार अपने हैं। उसके लिए पत्रिका/संपादक/संपादक मंडल को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। पत्रिका से सम्बंधित किसी भी विवाद के निपटारे के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।

चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में युगबोध: एक अध्ययन–निशा यादव 4493
कलिकथा: वाया बाइपास में मारवाड़ी परिवार का चित्रण–डॉ० दुर्गावती सल्लाम 4496
भारतीय रक्षा उद्योग का स्वदेशीकरण व रक्षा उत्पादन नीति–सुबोध मणि त्रिपाठी 4499
भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी कहानी–डॉ० चन्द्रशेखर यादव 4502
भारत के वर्तमान संसदीय लोकतंत्र के समक्ष चुनौतियॉ–महेन्द्र प्रताप बॉयला 4504
वेब धारावाहिक सेक्रेड गेम्स में अभद्र भाषा एवं गालियों के अतिशय प्रयोग का सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन–अविनाश त्रिपाठी 4507
नयी पंचायती व्यवस्था में महिलाएं–बबीता मीणा 4515
भारतीय संस्कृति तथा शिक्षा–अरुण अग्रवाल; डॉ० राजेंद्र कुमार मिश्रा 4517
इतिहास लेखन में मार्क्सवाद के सैद्धांतिक तत्व–प्रोफेसर (डॉ०) निधि रायजादा; सुषमा रानी 4520
भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दल की भूमिका–प्रभु दयाल जयंत 4523
कोविड-19 का युवाओं के रोजगार पर प्रभाव एक विश्लेषणात्मक अध्ययन–श्यामल किशोर ठाकुर 4526
हिन्दी रचनाओं में दलित आत्मकथा का अध्ययन–राजेश रंजन कुमार 4530
सनातन धर्म संस्कृति और वनवासी संस्कृति का साम्मिलन: एक विश्लेषण–डॉ० धीरेन्द्र त्रिपाठी 4533
अनुसूचित जनजाति की ऐतिहासिक और संवैधानिक पृष्ठभूमि–एमलिन केरकेट्टा 4537
दूधनाथ सिंह की कहानी 'माई का शोकगीत': स्त्री- अस्मिता की खोज–पवन कुमार शर्मा; डॉ० सुरेंद्र प्रसाद सुमन 4540
जैन मुनि की आहारचर्या–साध्वी धर्मरत्ना श्री; डॉ० समणी अमल प्रज्ञा 4544
वर्तमान भारतीय शैक्षिक परिदृश्य में रवीन्द्र नाथ टैगोर के विचारों की प्रासंगिकता–डॉ० परीक्षित लायेक 4550
राष्ट्र निर्माण में जनपदीय कवियों की भूमिका: छत्तीसगढ़ी कवियों के विशेष संदर्भ में–सतीश शर्मा 4553
माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् जनजातीय किशोरियों की शैक्षिक निष्पत्ति अभिप्रेरणा का उनकी संवेगात्मक स्थिरता के संदर्भ में अध्ययन –सपना शाही 4556
प्रशिक्षु शिक्षकों के शिक्षण पेशे के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन–ज्योथी करनवार; डॉ० राकेश कुमार डेविड 4562
शैक्षणिक प्रक्रिया में इंटरनेट की भूमिका पर अध्ययन–कमलजीत कौर; डॉ० राकेश कुमार डेविड 4565
'ग्लोबल गाँव के देवता: औद्योगीकरण की आँधी में उजड़ते गाँव और पर्यावरण'–कु० आशा मिश्रा 4572
रत्नकुमार सांभरिया की कहानियों की कथावस्तु (तात्विक विवेचन)–नीलम 4576
वाल्मीकि रामायण में चित्रित स्त्री छवि–डॉ० नीरज कुमारी 4579
रीतिकालीन कवियों के काव्य में सौंदर्य चेतना–रीना मलिक 4581
समाज मे नारी उत्पीडन के अनुपात का विश्लेषणात्मक अध्ययन–डॉ० अनिल विठ्ठल बाविस्कर 4587
शिबू सोरेन–स्मिता तिग्गा 4590
'हो' जनजाति की प्रशासनिक व्यवस्था–डॉ० विजया बिरूवा 4594
झारखण्ड में संताल जनजाति के प्रमुख नृत्य–पूनम टोप्पो 4596
छोटानागपुर में औपनिवेशक नीति, जनजातीय समाज एवं भूमि व्यवस्था पर प्रभाव–ओडिल एक्का 4601
राँची के प्रमुख सांस्कृतिक धरोहर–डॉ० पुष्पा कुमारी 4605
सोनार किले का एतिहासिक महत्व–पंचाल मायाबेन ए 4610
जैन साधना पद्धति में स्वाध्याय एवं ध्यान–डॉ० दुधनाथ चौधरी 4613
अमृतराय के उपन्यासों में नारी विमर्श–डॉ० स्वाती दुबे 4617
रघुवीर सिंह 'अरविन्द' रचित बुद्ध-चरित महासागर के आधार पर गौतम बुद्ध का महाभिनिष्क्रमण–लक्ष्मण शर्मा 4620
विवेकी राय के कथा.साहित्य में दलित विमर्श 4623
डॉ० मधुरबाला यादव–कृष्ण कुमार 4623

विवेकी राय के कथा.साहित्य में दलित विमर्श

डॉ० मधुरबाला यादव

आचार्य, हिंदी-विभाग, पी. पी. एन. पी. जी. कॉलेज, कानपुर (उ.प्र.)

कृष्ण कुमार

शोध-छात्र, हिंदी-विभाग, पी. पी. एन. पी. जी. कॉलेज, कानपुर (उ.प्र.)

साहित्य समाज की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है तो समाज को प्राय: एक सावयवी व्यवस्था के रूप में समझा जा सकता है। अर्थात, समाज कई अन्य इकाइयों से मिलकर बनता है। ये इकाइयाँ अपनी अलग पहचान भले रखती हैं किन्तु अलग अस्तित्व नहीं रख सकती हैं। इसी तरह, समाज स्वयं तब तक अस्तित्व में नहीं हो सकता है; जब तक कि उसकी इकाइयाँ उससे सम्बद्ध न हों। इकाइयों की सम्बद्धता मात्र समाज को जन्म नहीं दे सकती है; जब तक कि ये इकाइयाँ किसी क्रमबद्धता से आबद्ध न हों। समाज की सावयवी व्यवस्था कई स्तरों और खण्डों में बँटी होती है। समाज की ये विभाजनकारी विशेषता, प्रत्येक समाज में अनिवार्य रूप से पायी जाती है। कोई समाज इससे अछूता नहीं हो सकता है।

किंग्सले डेविस ने अपनी रचना ''स्तरीकरण के कुछ सिद्धांत'' में स्पष्ट किया कि ''कोई भी समाज स्तरीकरण के बिना नहीं हो सकता है।''[1] इसका तात्पर्य है कि समाज के स्तरों में असमानता पायी जाती है। स्तरों की असमानता प्रत्येक समाज में भिन्न-भिन्न आधारों पर पायी जाती है। कहीं नस्ल के आधार पर तो कहीं जाति अथवा वर्ग के आधार पर। स्पष्ट है कि समाज में कुछ लोगों या समूहों के पास दूसरे की तुलना में ज्यादा अधिकार या सामर्थ्य होते हैं। फलस्वरूप अधिक सामर्थ्यवान लोगों के द्वारा कम सामर्थ्यवान लोगों को विभिन्न तरीकों से दबा दिया जाता है और उनके हकों और हितों से उन्हें वंचित कर दिया जाता है जिससे वे विभिन्न अवसरों का लाभ उठाने से वंचित रहने लगते हैं। अंतत: समाज के समर्थ लोग नेतृत्व की भूमिका में स्थापित हो जाते हैं, और दबाए गये कमजोर लोग मातहत बनकर अनेक बन्धनों और बंदिशों में रहने के लिए विवश होते हैं। यही दबाये गये लाचार लोग दलित कहलाते हैं।

दलित-वर्ग, समाज का वह वर्ग जो सबसे नीचा माना गया हो या दु:खी और दरिद्र हो जिसे उच्च वर्ग के लोग उठने न देते हों। जैसे भारत की छोटी या अछूत माने जाने वाली जातियों का वर्ग।

दलित शब्द को डॉ. शिवराज सिंह 'बेचैन' ने परिभाषित करते हुए कहा है- "दलित वह है जिसे भारतीय संविधान में अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है।"[2]

राजेंद्र यादव दलित शब्द की विस्तृत परिदृश्य में व्याख्या करते हैं और स्त्रियों को भी इसके दायरे में रखते हैं। उनके विचार में यह व्यापकता इसलिए भी है क्योंकि भारतीय समाज में चाहे जिस वर्ण या वर्ग की स्त्रियां रही हों, उनके साथ भी दमन की नीति, शोषण, सामाजिक, शैक्षणिक समेत अनेक सामाजिक संरचनाएं मिलती हैं। इसलिए "वे स्त्रियों को भी दलित मानते हैं। पिछड़ी जातियों को भी दलितों में शामिल करते हैं।"[3]

हिन्दी भाषा में दलित शब्द का शाब्दिक अर्थ है दलन किया हुआ। इसमें वह हर व्यक्ति आ जाता है जिसका शोषण-उत्पीड़न हुआ है। रामचंद्र वर्मा ने अपने शब्दकोश में दलित का अर्थ लिखा है, ''मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौंदा या कुचला हुआ, विनष्ट किया हुआ।''[4]

इस प्रकार, हिन्दी और भाषा के शब्दकोषों को देखने से पता चलता है कि 'दलित' शब्द का अर्थ है- अधोमुख की ओर जाने वाला, पतनशील, उत्पीड़ित, पददलित, कुचला हुआ, रौंदा हुआ, मर्दित, टूटा हुआ, चिरा हुआ, दबाया हुआ, पदाक्रान्त, विनिष्ट किया हुआ, अस्पृश्य, अंत्यज, हरिजन, नीच, अवपीड़ित, मसला हुआ इत्यादि हैं।

विमर्श से आशय किसी विषय विशेष पर किसी उद्देश्य के साथ अथवा किसी उद्देश्य के बिना गहन और लम्बा चिंतन-मनन करके चर्चा करने से है। जिससे उस विषय विशेष के सभी जरूरी पक्षों को समझा जा सके। दलित विमर्श से आशय भारतीय सामाजिक व्यवस्था में कमजोर वर्गों के बारे में गहन रूप से विभिन्न माध्यमों से विचार व चर्चा करने से है जिससे उन्हें संविधान प्रदत्त मानव अधिकारों से युक्त करके एक समरस समाज का निर्माण किया जा सके। इन विभिन्न माध्यमों में साहित्य एक सशक्त माध्यम है जो दलितों की स्थिति पर विचार करने और उनकी चर्चा को एक उपागम के रूप में आगे बढ़ाने का समर्थन करता है। इसी कड़ी में डॉ. विवेकी राय के कथा साहित्य में उक्त उपागम की समीक्षा समीचीन है।

डॉ. विवेकी राय के उपन्यास बबूल (1967) के पात्र घुरबिन अपने पुत्र-जन्म के अवसर पर दूसरों द्वारा प्रसन्नता जताकर उत्सव मनाने के उकसावे पर अपनी भड़ास निकलते हुए कहता है कि "गरीब के लिए न तो कीर्तन है न गायन, उसके लिए यह काली रात है, यह भयानक मौत का अँधेरा है, यह प्रलय

की फँफाती गरल धारा है। यह साहस चूम लेने वाली भदवारी है।"[5] डॉ. राय अपनी रचना के पात्र के माध्यम से समाज के दलितों में उनकी स्थिति के प्रति विकसित हो रही चेतना के भावों को व्यक्त करते हैं; जिसमें, समाज के दबे-कुचले लोगों में उनकी खराब स्थिति को बनाये रखने वाले कर्मकांडों के प्रति न केवल अलगाव अपितु उससे नफरत की चेतना भी स्पष्ट दिखाई देती है। रचनाकार की दृष्टि में दलित समाज अब अपने शोषण और खराब स्थिति को जन्म देने वाली तरकीबों को समझने लगा है।

दलितों के शोषक अब इतने निर्लज्ज हो चुके हैं कि समाज के कमजोर वर्ग के शोषण की युक्तियों को इस तरह से लागू करने की जरूरत नहीं समझी जाती कि शोषित को इसका एहसास न होने पाये। शोषण की वृत्तियाँ अब खुलेआम हो गयी हैं, इसके सभी मर्यादित पक्ष पतित हो गये हैं। अर्थात, दलितों का शोषक वर्ग अब निर्लज्ज हो चुका है इन स्थितियों में परिवर्तन नितान्त स्वाभाविक हो गया है। डॉ. विवेकी राय के उपन्यास सोनामाटी (1983) के भूमिखोर भेड़िया शीर्षक में पात्र दीनदयाल पूँजीपति और सामंतों की कलई खोलते हुए कहता है कि "गाय को खिलाने, दुहने और दूध को आग पर रखकर औटाने वाले और हैं, मैं तो सिर्फ मलाई का शौकीन हूँ।"[6]

इसी तरह, समाज का अधिकार सम्पन्न वर्ग समाज के निर्योग्य वर्ग के शोषण को सतत बनाये रखने के लिए इतनी चतुराई से व्यवहार निष्पादन करता है और अपने लोगों को इस हेतु प्रशिक्षित करता रहता है; जिससे कि, शोषित वर्ग को उसके शोषण की भनक न लगने पाए, और उसके शोषकों और पीड़कों का हर-एक कार्य-व्यवहार उसे अपने हित में ही दिखाई देता रहे। डॉ. विवेकी राय के उपन्यास श्वेतपत्र (1942) के दूधन काका ऐसे शोषकों के प्रतिनिधि हैं जो स्वतंत्रता और समानता जैसे मूल्यों के पनपने के विरोध में हैं। उनकी उक्ति है कि "एक तो यह कि गाँव में अंधविश्वास का वातावरण बना रहना चाहिए। इससे सांस्कृतिक उत्थान होगा; दूसरे, लोगों को समझना चाहिए, कि देवताओं की शक्ति अपरिमिति है, गड़बड़ करने पर वे दंड देंगे, ओझाई-दवाई का प्रचार होना चाहिए, इससे नैतिक उत्थान होगा; तीसरे, छोटे लोगों को हमेशा कानून के दाँव में दबोचे रहना चाहिए, उन्हें सोचने की फुर्सत नहीं देनी चाहिए। जहाँ देखें कोई सर उठाकर चलता है, एक तीर फेंक देना चाहिए, इससे सामाजिक उत्थान होगा।"[7]

कमजोर वर्ग का शोषण सदैव बेलगाम होता है। उसका कोई पैमाना नहीं होता है, इसके साथ ही नफरत और धिक्कार के भाव भी चलते रहते हैं। इन्हे सामाजिक वंचन और श्रेष्ठता के दंभ का निकष समझा जा सकता है। जिसमें परिलब्धियों को साकार करने वाली श्रम को ही उसके प्राकृतिक अधिकारों की तुच्छ्ता भर देयक स्वीकार्य नहीं होता है। डॉ. विवेकी राय की कहानी-संग्रह जीवन-परिधि (1952) में संकलित कहानी 'समस्या एक दो की नहीं' में रचनाकार मानवता की उपेक्षा को दर्शाने के सन्दर्भ में लिखते हैं कि "शैतानों को पानी पिलाने का ठीका लिए बैठे हैं! जाओ उस दुकान पर।"[8]

उक्त की भाँति डॉ. विवेकी राय की कहानी-संग्रह जीवन-परिधि (1952) में संकलित कहानी 'भूमिधर' में कोदई कहता है कि "यही समझिये बाबू जी! रिआया का जी गाय-जैसा और मालिक का जी कसाई-जैसा! हमारा सबसे बड़ा अपराध यही था कि हम अपने को आदमी समझते हैं यदि, कुत्ते की तरह मालिक के द्वार पर चौबीस घंटा दम हिलाते रहते तो हम भी उनकी नजरों में अच्छे रहते, आप हाथ उठाने की बात कहते हैं! इधर मुँह खोला नहीं कि चमड़ी उधेड़ दी गयी।"[9] अधीनता और अधिकारहरण के पश्चात् अधीनस्थों से बाध्य चापलूसी की अपेक्षा विषमता आधारित सामाजिक व्यवस्था का न केवल द्योतक है; अपितु, अति अमानवीय भी है। जिसमें सामंती मानसिकता, कमजोरों के जमीर का उपहास अपने अहम को संतुष्ट करने के लिए करती है। कथन में विवशता के साथ अपनी स्थिति को समझने के सामर्थ्य और उसे मर्यादित ढंग से व्यक्त करने की कुशलता को देखा जा सकता है। इस प्रकार कमजोरों में चेतना की विद्यमानता साफ झलकती है।

समाज के साधन संपन्न पूँजीवादी मानसिकता के लोगों को समाज के दबे-कुचले लोग जब कभी किसी मुद्दे पर चुनौती पेश कर देते हैं तो उनका यह व्यवहार स्थापित व्यवस्था के शोषण आधारित प्रचलित नियमों और मूल्यों के विरुद्ध समझा जाता है शासित समाज के तुलनात्मक रूप से सामर्थ्यवान लोगों में यह विरोध करने की प्रेरणा पैदा करता है, विशेष तौर पर उन लोगों में जो कम से कम शारीरिक रूप से बलिष्ठ होते हैं। क्योंकि शासित समाज अपने शोषणकारी नियमों को प्राय: ताकत के बल पर ही लागू करता है। इस तरह दुस्साहस करने वाले को कठोरतम दंड दिया जाता है। जिससे उनका कोई मातहत ऐसी हिम्मत न कर सके अर्थात समाज में नोच-खसोट की परम्परा यथावत बनी रहे। डॉ विवेकी राय की कहानी-संग्रह जीवन-परिधि (1952) में संकलित कहानी 'भूमिधर' में कोदई कहता है कि "हमारा वह हाथी-जैसा ताकतवाला लम्बा-तगड़ा भदई भाई, बिना कसूर हवालात में बंद कर भूले गदहे-जैसा पीटा गया।"[10]

परम्परागत ग्रामीण भारतीय समाज में शोषण का स्वरूप वर्ग आधारित न होकर अधिकांशत: जाति आधारित है। क्योंकि समाज की बनावट विषमतापूर्ण है, और पारस्परिक सामूहिकता जजमानी प्रथा पर आधारित है। जिसमें जाति और धन जैसे पक्ष महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, उक्त पक्षों की उच्चता मनमाने और शोषणकारी व्यवहारों को बढ़ावा देती है। जिसमें ग्राहकता की सहज कृतज्ञता बोध का भी प्राय: अभाव दिखाई पड़ता है। जो अंतत: प्रदाता को चेतनशील बनने को प्रेरित करता है। डॉ. विवेकी राय की कहानी-संग्रह जीवन-परिधि (1952) में संकलित कहानी 'सेठ की हजामत' में सेठ कहता है- "साले ने तीन घंटे से ठंडक में परेशान कर रखा है बना जल्दी से, नहीं तो मार जूते चमड़ी उधेड़ देता हूँ।"[11]

ग्रामीण भारतीय समाज न केवल परम्परा प्रधान है अपितु यहाँ धर्म की प्रधानता भी पायी जाती है। जो धर्म आम जन के कल्याण के लिए कार्य करता है। वही धर्म मजलूमों के शोषण का प्रमुख हथियार बनता है। धर्म के नाम पर अनेक अंधविश्वासों और विवशताओं के जाल को तैयार किया जाता है। ईश्वर की नाराजगी का डर दिखलाकर एक तरफ शोषण और अपमानकारी के हितों की पूर्ति की जाती है, तो दूसरी ओर शोषणकारी यथास्थिति, बनाये रखने का प्रयास किया जाता है इन षड्यंत्रों की सूचना जब किसी शोषित की चेतना में पुष्टि पा जाती है तो स्वाभाविक रूप से वह व्यक्ति विद्रोही बनकर अपने जैसे लोगों को तुलना और कल्पना के माध्यम से अपने शोषण और अन्याय के प्रति आगाह करने लगता है। डॉ विवेकी राय की कहानी-संग्रह जीवन-परिधि(1952) में संकलित कहानी 'कफन' में दरपनी कहती है कि "भगवान्-भगवान् कहते तो कुल नौबत हो गयी! अब इससे अधिक क्या होगा? तेरे भगवान् की

ऐसी-तैसी! न खाने को मिलता है, न पहनने को मुअस्सर होता है और न रहने को ठौर है अब के जमाने में पाप-पुण्य-धर्म-अधर्म और अच्छा-बुरा सबका विचार उठ गया है जिसकी लाठी उसकी भैंस है 'दरबे से सरबे' है और 'चहबे से करबे' है और देखिए, इस कंट्रोल के जमाने में, बाबू लोगों को और बबुआइन लोगों को? किस प्रकार ये लक्क-दक्क हैं। हम तो कुत्ते की मौत मरते हैं, इस जेल में? इससे तो अच्छी सरकार की जेल है खाने-पहनने और रहने को कुछ तो मिलता है यहाँ चार जून में यदि पेट कभी भरा, तो धन्य भाग।"[12]

समाज वैज्ञानिकों के प्रयासों के फलस्वरूप गरीबी को प्रारब्ध का फल मानने की धारणा सैद्धांतिक रूप से भले बदल गयी हो किन्तु लोकजीवन में अभी भी इसे पिछले जन्म के बुरे कर्मों का फल बताकर, अकाट्य सिद्ध करके व्यक्ति को भाग्यवादी बनने के लिए विवश किया जाता है। जिससे व्यवस्था के बजाय इसे व्यक्ति के निजी दायित्वों से जोड़ दिया जाता है। जबकि वास्तविकता इसके उलट है कि किसी व्यवस्था में गरीबी का मुख्य और प्राथमिक कारण वहाँ उपलब्ध संसाधनों और अवसरों का असमान वितरण होता है पुनश्च इस विषमता पूर्ण व्यवस्था का लाभ लेने वाले ही उन लोगों को गलत सिद्ध कर देते हैं जिनके हकों-हुकूकों को दबाकर वह दम्भी बन जाते हैं। डॉ. विवेकी राय की कहानी-संग्रह नयी कोयल(1975) में संकलित कहानी 'गद्दी पर किसका पैर?' के उद्धरण "तुम फिर कभी बड़े आदमियों की गद्दी पर पैर रखने की कोशिश मत करना नागरिकता और मनुष्यता सीखो, क्योंकि तुम गरीब हो।"[13]

पुनरावृत्ति, प्रतिमानों के स्पष्टीकरण को सुगम बनाती है। उत्पीड़ित समाज के निम्नतर सदस्य भी तुलनात्मक ढंग से, आकस्मात् उनके हित में काम व बात करने वालों की असली मंशा समझने लगते हैं। जिसकी पुष्टि करने के बहाने वे अपने समाज को इससे सावधान होने की न केवल सूचना देते हैं, बल्कि उन्हें दलित स्थिति की एक दृष्टि भी प्रदान करते हैं। डॉ. विवेकी राय की कहानी-संग्रह गूँगा जहाज(1977) में संकलित कहानी 'चुनाव-चक्र' में तेतरी की माँ कहती है- "सोचो तुम, दुनिया ऐसी उपकारी नहीं है मतलब से आये हैं तो घर-घर नौकरी बाँटते फिरते हैं, नहीं तो मजूरी माँगने पर जूतों से बात करते हैं।"[14]

डॉ. विवेकी राय के समृद्ध कथा-साहित्य की पृष्ठभूमि ग्रामीण अंचल है, जहाँ भारत की अधिकांश आबादी बसती है। अस्तु, कहना गलत न होगा कि आपके साहित्य का सन्दर्भ व्यापक है। विस्तृत भारत की बुनियादी सामाजिक संरचना जाति पर आधारित होने के कारण समाज के एक बृहत्तर हिस्से को जातीय निर्योग्यता के आधार पर 'हीन' मानते हुए उसके प्राकृतिक और सामाजिक अधिकारों को छीनने के उद्देश्य से उसे निरंतर दबाये रखने के विभिन्न प्रयास किये गये और उसे जानवरों से भी बदतर समझते हुए अनेक यातनाएँ दी जाती रही हैं। इन समस्त पक्षों का वर्णन डॉ. विवेकी राय की रचनाओं में एकरसता से उल्लिखित है। डॉ विवेकी राय की रचनाओं में पात्रों को दिए गये नामों से समाज की ठेठ बनावट की झलक मिलती है। महिलाओं की उक्तियों में श्रम की समरसता के साथ शोषण की स्थिति से व्याकुलता दर्शित होती है और पुरुषों के व्यवहारों में भयमिश्रित दृढ़ता की वृत्ति साफ देखी जा सकती है। अतः स्पष्ट है कि समाज का कमजोर वर्ग अपनी दयनीय स्थिति के कारणों और अपने शोषकों के प्रति चेतनाशील होने को आतुर है।

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. डॉ. जे. पी. सिंह समाजशास्त्र अवधारणाएँ एवं सिद्धांत, नई दिल्ली, 2003, पृष्ठ-245.
2. ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृ. 15.
3. ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृ. 15.
4. रामचंद्र वर्मा, प्रामाणिक हिंदी कोश, लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997, पृ.-391.
5. डॉ विवेकी राय, उपन्यास, बबूल, अनुराग प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण, 2001, पृष्ठ संख्या-17.
6. डॉ विवेकी राय, उपन्यास, सोनामाटी, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण, 2010, पृष्ठ संख्या-80.
7. डॉ विवेकी राय, उपन्यास, श्वेतपत्र, ज्ञान गंगा प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण, 2015, पृष्ठ संख्या-10.
8. डॉ विवेकी राय, कहानी-संग्रह, सामलगमला, जीवन-परिधि, समस्या एक दो की नहीं, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 2011, पृष्ठ संख्या-06.
9. डॉ विवेकी राय, कहानी-संग्रह, सामलगमला, जीवन-परिधि, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 2011, पृष्ठ संख्या-38.
10. डॉ विवेकी राय, कहानी-संग्रह, सामलगमला, जीवन-परिधि, भूमिधर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 2011, पृष्ठ संख्या-38.
11. डॉ विवेकी राय, कहानी-संग्रह, सामलगमला, जीवन-परिधि, सेठ की हजामत, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 2011, पृष्ठ संख्या-41.
12. डॉ विवेकी राय, कहानी-संग्रह, सामलगमला, जीवन-परिधि, कफन विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 2011, पृष्ठ संख्या-45.
13. डॉ विवेकी राय, कहानी-संग्रह, सामलगमला, नयी कोयल, गद्दी पर किसका पैर?, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 2011, पृष्ठ संख्या-176.
14. डॉ विवेकी राय, कहानी-संग्रह, सामलगमला, गूँगा जहाज, चुनाव-चक्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 2011, पृष्ठ संख्या-211.